

संक्षिप्त भावार्थ_दासबोधामृत : अध्याय ८ :

ॐ अथ श्रीसमर्थ_रामदास विरचित दासबोध ग्रन्थात् मथित "सन्क्षिप्त भावार्थ_दासबोधामृत" सारे

" आत्मज्ञान, समतिन्वय, पञ्च_महाभूत , " नाम अष्टमोऽध्यायः

(मूळ दासबोध दशक १५ : " आत्मज्ञान ")

ॐ श्री गणेशाय नमः ।

श्रीराम जय राम जय जय राम | जय जय रघुवीर समर्थ !

चातुर्य लक्षणे, निस्पृहता लक्षणे | अखण्ड ईश्वर_स्मरण सहजपणे | जगणे सायासाविण समाधान वृत्तीने | वर्णिले 'आत्मज्ञान' नाम पंधराव्या दशकी (८.१)

'श्रेष्ठ' कर्मे करिती 'श्रेष्ठ_जन' | 'कनिष्ठ' गुन्तती कार्यात कृत्रिम | चोरटे करिती चौर्य_कर्म | मूर्ख जन करिती मूर्ख_कर्मे (८.२)

सर्वासही वाटे 'मी उत्तम चतुर' | 'मी अति देखणा, हुषार व सुन्दर' | ऐसी बाळगोनी अनुमाने स्व_सुखद | झपाटले स्वाभिमानी दुराभिमानाने (८.३)

जाणावे वास्तविकतः कोण श्रेष्ठ_समर्थ | त्या सर्व जनासवे साधावे सख्य मित्रत्व | चातुर्याचे हे एक अति_प्रमुख लक्षण | नान्दविते सुख_समाधान सर्वत्रही जे (८.४)

रिकामा क्षणही जाऊ न द्यावा | शिकावे, शिकवावे नाना मत, मतान्तरा | उपासना, पाठान्तरांच्या गजरा | आणिती उदण्ड कीर्ती साधकान्ना (८.५)

वयोवृद्ध, पोक्त, वडीलधा-या सज्जनान्ना | अनायासेच मिळते आदर व सन्मान्यता | परन्तू विवेकानन्द, ज्ञानदेव सारख्यान्ना | पात्रतेने मिळे मान अधिक त्याहुनीही (८.६)

पृथ्वी, आप, तेज, वायू व आकाश | यांच्यापासुनीच जन्मती, सर्वही सचराचर | आयुष्यान्ती पावता, मरण अटळ_दुर्धर | या पञ्च_तत्वीच विलीन देह सकळिकांचे (८.७)

आपण स्वतः कोण ? हेच आकळेना | समजलेच तरीही उमजेना, पटेना | प्रत्यय आल्याविना नीट अनुमानेना | ऐशी सदा मनस्थिती बहुसंख्य जनांची (८.८)

सार_असार विवेके, वैचारिक मन्थने | 'ज्ञान_विज्ञान' स्वरूपी नवनीत प्रगटे | भक्ती, सत्कर्म, अर्चना, उपासनादिक मार्गे | 'परब्रह्माशी_विभक्ति' क्षीण होई (८.९)

सकल वा बहु_जनास, जे_जसे 'मान्य' | 'सामान्य_ज्ञाना'ची तीच धरावी 'ओळखण' |

"हो का ? बरवे !" असे त्यास सम्बोधून | भाण्डण, वाद वादंग टाळीत रहावे (८.१०)

हेकाण्ड_ताण्डवी तर्कट पण्डितासवेही | वाद टाळण्यास्तवही "हो का ? बरवे !"ची | वापरावी 'युक्ती', परी अन्तर्यामी | 'स्वप्रचीती'चेच ज्ञान सांभाळावे (८.११)

सत्यम् ब्रूयात्, प्रियम् ब्रूयात् | न ब्रूयात् सत्यम्_अप्रियम्

बहुतांचे मन राखून वागणे | प्रसंग ओळखोनिच बोल बोलणे | शब्दात माधुर्य व विनम्रता राखणे | हीच असती लक्षणे चतुर सज्जनांची (८.१२) [१५.६.११_१५]

मुळे_मुळ्या पसरती व जाती जितकी खोल | तितुकीच सदृढ वाढती, वरती वृक्ष_वेल | तैसेच जाणावे विनम्रतेचे गुह्य | विनम्र_भाव वाढवी 'सुदृढता' ज्ञानियांची (८.१३)

पर्णे, पुष्पे, फळे, फान्द्या | पडती, झडती, येती पुनःपुनः | परन्तू मुळाशीच होता रोग नाना | वृक्ष_वेली उन्मळून पडती खाली (८.१४)

जो जो अन्तर्यामीच खचला | जो पुढचे शिकताना, मागचे विसरला | जणू तो देव_दानव युद्धातच सापडला | स्मरण व विस्मरण नाम अनुषंगाने (८.१५)

धन्य धन्य परमेश्वराची करणी | अनन्त या स्थूल_सूक्ष्म जीवांच्या खाणी | सर्वान्तर्यामी आत्मा व परमात्मा स्वरूपी | अनात्मा देह रूपेही निवसतो तोचि तो (८.१६)
या विश्वात जो सर्वत्रच भरला | त्याच्याशी 'अनन्य'भाव हीच 'सहज' भावना | अन्यथा सर्वथा दुरहंकार व्यर्थसा | हीच 'तुर्ये'चीही भावावस्था जाणावी (८.१७)
स्वप्नात वा कल्पनेत वावरताना | सखदुःखानुभूति होते जनान्ना | परन्तू जागृतीत वा वास्तविकतेत परतता | तो सर्व खेळ एक 'मिथ्या_आभास' (८.१८)

(मूळ दासबोध दशक १६ : "सप्ततिन्वय, पञ्च_महाभूत "

'सप्त_तिन्वय' नाम सोळाव्या दशकी | स्तवने व वर्णने पञ्च_महाभूतांची | वाल्मिकी, सूर्य, महद्भूतांची | आत्मारामाचीही गाइली गाथा (८.१९)

वैश्विक सृजन, स्थिति, विलय यांची | काल_चक्रानुरूप घडणा-या घटनांची | वर्णने, गणिते सूत्रांत शत_कोटी | होती मूळ_भीमकाय वेद_वाङ्मयात (८.२०)

मानवी आयुष्यच अधिकात अधिक | शत वर्षे त्यात अर्धे निद्रेतच व्यर्थ | पुढे खूपच खर्च 'देह_रक्षणार्थ' | खाणे, पीणे, व्यायामातही नित्यच खर्च होते (८.२१)

मानवी बुद्धीही अतिशयच 'सीमित' | त्यातच त्यास आवडे क्रीडा, मनोरंजन | त्यामुळे वेद, शास्त्र शिकणार कसे कोण ? | सोडविला हा प्रश्न व्यास_वाल्मिकादिकान्नी (८.२२)

व्यासान्नी वेदांचे काढिले सार गर्भ | त्याचेही केले चार भाग विभक्त | मग ते शिकवले शिष्यास एकेकच | चार शिष्य विख्यात व्यासांचे ते | (८.२३)

'ऋग्वेद' शिकवला 'पैल' शिष्यास | 'यजुर्वेद' शिकवला वैशम्पायनास | 'सामवेद' शिकवला 'जैमिनी'स | 'अथर्ववेद' शिकवला सुमन्तूला (८.२४)

वाल्मिकीन्नीही या प्रविस्तृत अशा | शतकोटी ऋचान्ना सुलभपणे शिकण्याला | लक्षांत स्मृति_सुलभ व ज्ञानगम्य व्हावया | गुम्फिले सुन्दर अशा कथानका मध्ये (८.२५)

वेद_गुह्यार्थ कथानकात गोविण्याचे | सर्व प्रथम श्रेय वाल्मिकी ऋषीन्ने | म्हणोनि फक्त त्यान्नाच 'आद्यकवी' ऐसे | ब्रीद वा 'पद' झाले सर्वमान्य संप्राप्त (८.२६)

पुढे वेद_व्यासान्नीही | हीच युक्ती वापरोनी | महाभारताची केली निर्मिती | अठरा अठरा पुराणे व उपपुराणेही (८.२७)

पुढे कालिदासादिक लेखकान्नीही | अभि_ज्ञान शाकुन्तलादिक 'नाटके' लिहोनी | मनोरंजनासहित ज्ञान शिकण्या_शिकवण्याची | नाट्यमय पद्धतही केली रूढ (८.२८)

'वल्मीक' म्हणजे मुंग्यांचे 'वारूळ' | अंगावर मुंग्या जणू चढल्यागत 'रोमांचक' | रामायणात ऐशी वर्णने अनेक | नमन ऐशा आद्य_कवी वाल्मीकी ऋषीन्ना (८.२९)

ध्येयः सदा सवितृ_मण्डल मध्यवर्ती | नारायणः सरसिजासन सन्निविष्टः

केयूरवान् मकर कुण्डलवान् किरीटी | हारी हिरण्मयवपुः धृत शङ्ख_चक्रः

सूर्य रवि_मण्डळी मध्यवर्ती | थोर त्याची गुरुत्वाकर्षणाची शक्ती | तोच ठरवितो मुख्य 'सुर' वा लयबद्धतेसी | या मण्डलामधिल घटना_चक्रांचा (८.३०)

प्रथम मुख्य सुर असे अहो_रात्रीच्चा | तो सूर्याच्या पूर्व_पश्चिम गतीचा | सूर्योदय_सूर्यास्त समय_चक्रांचा | अनुभव निवासितान्ना पृथ्वी आदिक (८.३१)

द्वितीय मुख्य सुर असे ऋतु_चक्राचा | सांवत्सरिक वसन्तादिक षड्_ऋतुंचा | अथवा उन्हाळा, पावसाळा, हिंवाळा | या तीन स्थूल चातुर्मासांचाही (८.३२)

तिसरा मुख्य सुर असे 'संवत्सराच्चा' | सर्वच_ऋतुंच्या वार्षिक पुनरावर्तनांचा | खगोली नक्षत्र_राशीच्च्या गृहा_मधुनचा | मार्ग सूर्याचा दृश्य जसा_भूमण्डलावरी (८.३३)

ऐशा सर्वही काल गणनांचा | पतझड वा नवपल्लवी वृक्षांवर दिसण्याचा | लय वा 'सुर' ठरविणारा राजा | त्या सूर्य_नारायणास नमस्कार (८.३४)

नन्तर नमूया या **भूदेवी** पृथ्वीला | जिने धरुन ठेविलेय वायुमण्डलाला | पाणी, दगड, माती, पशू_पक्षान्ना | म्हणूनच सजीव सृष्टी जगतेय हो येथे (८.३५)

ही 'धारणा' शक्ती सर्वच विश्वातली | 'ग्राह्यत्व' तत्व वा ग्रैव्हिटी आकर्षणाची | पृथक् पृथक् पणे अस्तित्वात्मक '**पृथ्वी**' | तात्विक दृष्ट्या सर्वच विश्वात वसते (८.३६)

'**वजन**' नामक मापक दण्डाने | आज ज्याची ओळख ओळखली जाते | ते 'पृथ्वी' तत्व सर्वच विश्वात्मक असे जे | तयासी नम्रतेने नमन माझे (८.३७)

'पृथ्वी' माता मूर्तिमन्त **क्षमेची मूर्ती** | नांगरती, खणती, मल_मूत्र विसर्जिती | तरीही कधीही कुणालाही ती | प्रतिकारात्मक 'शिक्षा' देऊ न इच्छिते (८.३८)

आश्रय_दात्री, अन्न_दात्री | स्थैर्य_धैर्य_दात्री ही **धरित्री** | 'स्थिति' तत्वात्मक श्रीविष्णूची | द्वितीय_पत्नी म्हणोनी सुप्रसिद्ध (८.३९)

आता नमन **वरुण** वा आपोनारायणासी | 'जल' रूपे जो दृश्य, मानवी दृष्टीसी | ओढे, नद्या, सागर, सरोवरे, विहिरी | 'वर्षा' स्वरूपे मेघातुनीही वर्षे जो (८.४०)

द्रव स्वरूपी तेल, रस, नीर | रक्त, मूत्र, अश्रू, घाम, कफ, क्षीर | इत्यादिक असंख्य रूपे 'आप' तत्व | सर्व विश्व व्यापून वसत आहे (८.४१)

'**सर्वोपरी_आवरण_तणाव**' नाम शक्ती | त्यामुळेच द्रव थेम्ब गोलाकार दिसती | 'पृथ्वी' तही मुख्यत्वे लाव्हा_द्रवच अभ्यन्तरी | म्हणोनीच 'पृथ्वी' ही गोलाकारच आहे (८.४२)

ग्रह, नक्षत्रादिक सर्व आकाशगंगाही | खगोलातिल अस्तित्वे गोलाकार भासती | ही सर्व त्यामधिल **आप_तत्वाची** | दृश्य प्रत्ययाची देती साक्ष (८.४३)

ॐ नमो वरुण आपोनारायणाय



तीर्थ_क्षेत्री औषधिक वा पेय पुण्योदके | अन्यत्र कोठे क्षार कोठे पीयूषोदके | नाना देशी, स्थलान्तरी भूगर्भीही उदके | नाना गुणधर्माञ्ची या भूमण्डळी (८.४४) [१६.४.१३_१४]

तीस_चाळीस फूटांच्याही वरती | देवाची करणी अन् नारळात पाणी | रोग्यांचा आहार, वैद्यांची औषधी | '**आप_जल**' प्रत्येक फळा_फुला_मुळात नित्य (८.४५)

जळांत भिजलेलेच बीज अड्डुरते | मत्स्यादिक जलचरास आधार जे देते | सर्व सजीवांचे 'जीवन'च जणू जे | त्या '**आप तत्वास**' नमस्कार (८.४६)

अग्नी हे तर वैदिक **'सर्व_दैवता_मुख'** | असति **मुखे** ज्यास **दोन, आणि पाय तीन** | यज्ञात 'स्वाहा' म्हणुन अर्पित सर्व अन्न | खातो शीघ्र ते **जालुन व वितरण** करि तयांचे (८.४७)
 ज्या ज्या देवतेला जे जसे हवे तसे | ज्वलित पञ्चमहाभूती विलीन होत जाते | पुनश्च नव्या सृजनाला उपलब्ध मग होते | म्हणोनीच प्रेतांचीही करावी हो होळी (८.४८)
 मानवास स्नानास हवे गरम पाणी | वरण_भात भोज्य अन्न शिजवण्यास अग्नि | **'तापमान' उष्णता नाम 'अग्नि_मुख'** उपयोगिनी | कारखान्यात किती बनविती पदार्थ ! (८.४९)
 द्वितीय मुख अग्नीचे **'दीप्तिमान'** तेज | तापमानानुसार करी **'प्रकाश_किरण'** उत्सर्जन | त्यातील काही थोडेसेच दृश्य मानवास | असंख्यात प्रकाश किरणे विवरती अदृश्यसी (८.५०)

ॐ नमो अग्रये



अग्नीस असती पाय तीन वा त्रिधा | प्रथम **'स्पर्श'** तापवितो शेजारच्या_दुज्या | जास्त गरम टोकाहुन कमीकडे सदा | **वाहते 'उष्णता'** या पद प्रयोजनाने (८.५१)
 द्वितीय पद अग्नीचे **चलन** अणु अणुंचे | उष्ण हवा जाते वर, गार खाली येते | सुगन्धही दरवळतो चहूकडे ज्याच्यामुळे | द्रव घन पदार्थातही ही क्रिया अति_मन्द (८.५२)
 तृतीय पद अग्नीचे **'प्रकाश_उत्सर्जन'** | त्यायोगेच सूर्याची उष्णता प्रसरुन | भूमीवरिल तापमान करिते गरम गरम | हिंवाळ्यांत शेकोट्या 'शेक' देताती (८.५३)
सप्त भुजा, चतुःश्रुंग अग्नि देवतेस | ऐसेही अग्नीचे वर्णिले स्वरूप | केलेच पाहिजे यावरही चिन्तन | समजून उपयोग करण्यास त्या सर्वांच्चा (८.५४)
 दक्षिण, गार्हपत्य, आहवनीय | सम्य व आवसथ्य ऐशी पांच | स्वरूपे वा प्रकार वैदिक शास्त्र ग्रन्थात | **उष्णता_शक्ती अग्नीचे** वर्णिले असती (८.५५)
 आता नमू **'वायू'** वा **'वहन_शक्ती'**ला | दृश्य वाहत्या नद्या, वा सागर लाटा | वादळी वा-याने वृक्षही कोलमडता | श्वासोच्छ्वासा गणिक **'जाण'** प्रति सजीवासी (८.५६)
 श्वासोच्छ्वास, प्राणायाम या क्रियांमधून | वर्णिले वायूचे दहा मुख्य प्रकार | प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान | नाग कूर्म, कर्कश, देवदत्त व धनंजय (८.५७)
 ब्रह्मा, विष्णू, महेश्वर | इन्द्रादिक तेहतीस कोटी सुरवर | नवकोटी कात्यायनींचे प्रकार | छप्पन्न कोटी चामुण्डाही वायू_स्वरूप (८.५८) [१६.६.१९_२१]
 सामान्यतः पदार्थांच्चे तीन प्रकार | "घन, द्रव व वायू" गणिले जातात | त्या संदर्भात वायू वात_स्वरूप | गुणधर्म काही मुख्य असती ऐसे (८.५९)
 वायूस स्वतःचा 'आकार'च नाही | घटी तद्_घटाकार बनून तो राही | व्यापतो घटाचे 'आकाश' सर्वही | अणुत शिरुन आदळतो, भिन्तीवर घटाच्या (८.६०)
 या आदळ_आपटिने बनवितो तो 'दबाव' | तापमान अग्नीच्या प्रमाणात वाढवीत | आकाशासी त्याचे प्रमाण असे 'व्यस्त' | गणित नियमानुसार वर्ते वायू (८.६१)
 ठराविक वजनाचा वायू घटी पकडता | तापमान त्याचे सु_'स्थिर' राखता | गुणाकार 'दबाव' व 'आकाश' तत्व संख्यांच्चा | स्थिर राहे बदलल्यास 'आकाश' त्या घटाचे (८.६२)
 दबाव व आकाशाच्या गुणित संख्येला | तापमान संख्येने विभागिले असता | जी काही येते त्या संख्येला | 'स्थिर' राखे वायू, बदलता तापमान (८.६३)

आता नमू 'महद्_भूत' नाम शक्तीला | जीवात्मा, अंतरात्मा ही नामेही ज्या शक्तीला | सजीवांमधिल या प्राण_जाणीव शक्तीला | जिच्या विना निष्प्राण वा 'मृत' होई शरीर (८.६४)

एको विष्णुः महद्_भूतम् पृथक् भूतानि अनेकशः |

त्रीन् लोकान् व्याप्य भूतात्मा भुङ्क्ते विश्वभुगव्ययः (८.६५)

"एको विष्णुः महद्_भूतम्" ऐसे | बोल पुराणात व्यास ऋषी बोलिले | तरी ते त्रैगुण्येश्वर संदर्भातच घ्यावे | अनुभव, प्रत्यय मान्यतेने (८.६६)

मानवी शरीरात वसती दश_इन्द्रिये | पाच ज्ञान_इन्द्रिये व पाच कर्म_इन्द्रिये | यांच्यावर स्वामित्व महद्_भूत गाजवे | 'ज्ञेय' जाणण्यास, वा करण्यास्तव कार्ये (८.६७)

नेत्र, घ्राण, श्रोत्र, रसना, व त्वचा | या पाच ज्ञानेन्द्रियांना वापरुनिया | दृश्य, गन्ध, शब्द, रस, स्पर्शात्मक ज्ञाना | प्राप्त करुन जीवात्मा भोगतो सुख_दुःखादिक (८.६८)

हस्त, पाद, जिह्वा, शिश्न व गुदा | वापरुनिया या पाच कर्मेन्द्रियान्ना | साधण्यास चारही 'पुरुषार्थात्मक_साध्या' | कार्ये करि जीवात्मा, स्वेच्छया सदैव (८.६९)

खातो, पीतो, बोलतो, गातो | वाजवतो, नाचतो, डोलतो, धावतो | कार्याचा व्याप वाढवितो, घटवितो | हसतो, रडतो शरीरी शरीरी (८.७०)

पद्मिनी सारख्या सुन्दरी नारी | महद्_भूताविना सौन्दर्य ते व्यर्थची | पुरुन वा जाळून टाकाव्या लागती | पञ्चभूती विलीन व्हावयासी शरीर (८.७१)

स्त्रीचा जीव पुरुषावरी | पुरुषाचा जीव स्त्रीवरी | गाय_बैल गवत प्रीतीने चरती | वाघ_सिंह, मानवास ते खाद्य अयोग्य (८.७२)

ज्या प्राण्याचा 'देह' महद्_भूताने व्यापिला | त्यानुसारच आवडी जडती तयाला | लिङ्ग, देश, वयानुरूपही बदलती गरजा | देवोपासनाच्चीही बदलते 'आवड' (८.७३)

स्वानुभवे कळला, पटला मनाला | तोच मार्ग उपासनेला निवडावा | शरीर_स्वास्थ्य्याच्याही सर्व_गरजान्ना | पूरकच असावा सदा, उपासना_मार्ग (८.७४)

"शरीरमाद्यम् खलु धर्म साधनम्" | हा मन्त्र सदैवच स्मरणी राखावा | धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष साधावया | सर्व प्रथम आरोग्य संरक्षणाचे प्रामुख्य (८.७५)

शिष्याच्या जाणोनि आवडी निवडी | लिङ्ग, वय, आरोग्य_रक्षणाच्या बाबती | समजून गुरुने सुचवावे मार्गही | योग्यता, अधिकार व मनानुकूल ऐसे (८.७६)

बाराही महिने चोवीसही तास | एकच मार्ग चालणे कुणासही अशक्यच | भोजनास हवेत नाना रुचीन्ने पदार्थ | तैसेच हवे वैविध्य उपासना आराधना विधीन्नाही (८.७७)

काळ_वेळ, शारीरिक_मानसिक परिस्थिती | स्थल, स्थानिक मान्य_व्यवहार्य रीती | हे सर्वही साम्भालुनी करावी देव_भक्ती | 'भावाचाच_भुकेला' असे हो परमेश्वर (८.७८)

इति श्रीसमर्थ_रामदास विरचित दासबोध ग्रन्थात् मथित "सन्क्षिप्त
भावार्थ_दासबोधामृत"सारे

" आत्मज्ञान, सप्ततिन्वय, पञ्च_महाभूत" नाम अष्टमोऽध्यायः

ॐ तत्सत् ब्रह्मार्पणमस्तु | जय जय रघुवीर समर्थ !